**International Journal of Humanities and Social Science Research**
**www.socialsciencejournal.in**
**ISSN: 2455-2070**
**Received: 28-07-2022; Accepted: 13-08-2022; Published: 31-08-2022**
**Volume 8, Issue 4, 2022, Page No. 155-158**

# नवजागरण आन्दोलन में कुमाऊँनी लोक साहित्य की भूमिका

**दीपा लोहनी[1], डॉ. नीरज रूवाली[2]**
[1] शोध छात्रा, इतिहास विभाग, एम. बी. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत
[2] इतिहास विभाग, एम. बी. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत

**सारांश**
नवजागरण आन्दोलन भारतीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है। इस घटना ने भारतीय समाज में एक नवीन विचारधारा को जन्म दिया। इस आन्दोलन की शुरूआत 19वीं सदी के आरंभिक दौर से मानी जाती है। यह वह समय था, जब भारत पर औपनिवेशिक सत्ता स्थापित हो चुकी थी। पाश्चात्य शिक्षा तथा ईसाई धर्म के प्रचार–प्रसार पर जोर दिया जा रहा था। ईसाई धर्म के प्रचार–प्रसार ने सनातन धर्म में घर कर चुकी कुरीतियों एवं अंधविश्वासों के विरूद्ध आवाज बुलंद करने का अवसर प्रदान किया। लोग समानता एवं सामाजिक–आर्थिक उन्नयन के अवसर की चाह में धर्म परिवर्तन को मजबूर हुए। कुमाऊँ, जो भारत का एक महत्वपूर्ण पर्वतीय क्षेत्र है, भी इस घटना से अछूता नहीं रहा।
कुमाऊँ के ऐतिहासिक अध्ययन से ज्ञात होता है कि इस क्षेत्र का अतीत सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टिकोण से अत्यन्त गौरवशाली रहा है। यहां की धर्मस्थली एवं तपस्थली इसे देवभूमि बनाती है। आरंभिक समाज में यहां जातिगत भिन्नता के भी प्रमाण नहीं मिलते हैं। अनेक इतिहासकारों का मानना है कि इस क्षेत्र में जातिगत भेदभाव बाहर से आये ब्राह्मण एवं क्षत्रियों की देन है। लेकिन 19वीं सदी के आरंभिक दशक तक यहां की सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था भी अन्य क्षेत्रों के समान ही शोषण एवं उत्पीड़न, छुआछूत, अंधविश्वास एवं रूढ़िवादी विचारों का गढ़ बन चुका था। 19वीं सदी के आरंभिक काल में जब यह भू भाग अंग्रेजों के अधीन हो गया तब यहां ईसाई धर्म के प्रचारकों एवं पाश्चात्य शिक्षा तथा संस्कृति के प्रसार को भी बल मिला। इससे सांस्कृतिक संक्रमण की स्थिति उत्पन्न हुई। जो समाज वर्षों से दासता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था, ने धर्म परिवर्तन की राह पकड़ी। समाज में आए इस प्रकार के परिवर्तन ने सामाजिक–धार्मिक सुधार आन्दोलन का बीजारोपण किया। इस आन्दोलन को गति प्रदान करने तथा समाज में समानता कायम करने के लिए बुद्धिजीवी वर्ग ने अलग–अलग तरीके अपनाये। इनमें लोक साहित्य का भी अपना विशेष महत्व रहा है।
लोक साहित्य लोक–जीवन एवं लोक–जन से जुड़ा साहित्य है। इसका अतीत मौखिक रहा है, लेकिन बाद के वर्षों में इसे साहित्यिक रूप में संकलित किया जाने लगा। आज जबकि समाज अनेक सामाजिक एवं सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना कर रहा है, इसके प्रति सामान्य जन को जागरूक करना तथा समाधान में उनकी सहभागिता सुनिश्चित कराना अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गया है। इस दिशा में लोक साहित्य भी एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में प्रयोग में लाया जा सके, इसलिए पूर्व में इनकी सामाजिक जागरूकता में इसकी महत्ता को जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है। इन्हीं कारणों से प्रस्तुत शोधपत्र हेतु शोध शीर्षक 'नवजागरण आन्दोलन में कुमाऊँनी लोक साहित्य की भूमिका' का चयन किया गया है।

**मूल शब्दः** पुनर्जागरण, पाश्चात्य संस्कृति, लोक साहित्य, सामाजिक आन्दोलन, सांस्कृतिक संक्रमण, राष्ट्रीय चेतना

## प्रस्तावना
19वीं सदी भारतीय इतिहास में सामाजिक–सांस्कृतिक एवं राजनीतिक दृष्टिकोण से बेहद महत्वपूर्ण है। यह वह दौर था जब भारतीय समाज जातिवाद, धार्मिक अंधविश्वास, रूढ़िवादी मनोवृत्ति आदि कुरीतियों से ग्रस्त था। ब्रिटिश शासनकाल में भारतीय समाज और संस्कृति पर पश्चिमी देशों की सभ्यता, संस्कृति, शिक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का गहरा प्रभाव पड़ा। पाश्चात्य शिक्षा एवं ईसाई धर्म के सम्पर्क में आने के पश्चात समाज में एक नवीन बुद्धिजीवी वर्ग का उदय हुआ। इस वर्ग से जुड़े नवयुवकों एवं विद्वतजनों ने समाज में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों एवं अंधविश्वासों के विरूद्ध आवाज उठानी शुरू की। सामाजिक सुधार की दिशा में उठाए जाने वाले इन्हीं प्रयासों ने सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन की नींव रखने का कार्य किया। ब्रह्म समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, थियोसोफिकल सोसायटी, रामकृष्ण मिशन आदि संस्थाओं की स्थापना पाश्चात्य शिक्षा एवं धर्म के कारण सामाजिक चिंतन की दिशा में उन्मुख होने का ही परिणाम है।
पुनर्जागरण या नवजागरण आन्दोलन और सामाजिक सुधार के संबंध में अपने विचार अभिव्यक्त करते हुए डॉ. ए. आर. देसाई ने लिखा है कि ''अंग्रेजी शासन के दिनों में समाज और धर्म सुधार संबंधी जो आन्दोलन शुरू हुए, वे भारतीय जनता में पनपती एवं विकसित होती राष्ट्रीय चेतना एवं पश्चिम के विचारों का बढ़ता प्रभाव के परिणाम थे। इन आन्दोलनों ने धीरे–धीरे सामाजिक और धार्मिक अंधविश्वासों एवं रूढ़िवादी मनोवृत्तियों में परिवर्तन लाने की दिशा में कार्य किया। सामाजिक क्षेत्र में जाति प्रथा उन्मूलन, महिलाओं के समान अधिकार की व्यवस्था, बाल विवाह उन्मूलन तथा विधवा को प्रोत्साहन, अमानवीय कृत्यों एवं असमानता पूर्ण व्यवहार का विरोध आदि इस आन्दोलन के केन्द्र बिन्दु बने रहे। इसी दौरान हुए धार्मिक आन्दोलनों ने धार्मिक अंधविश्वास की समाप्ति, वंशानुगत पुरोहित व्यवस्था का उन्मूलन, मंदिरों में दलित जातियों के प्रवेश की अनुमति आदि व्यवस्था को केन्द्र में रखकर कार्य किया गया।'' इससे यह स्पष्ट होता है कि पुनर्जागरण आन्दोलन समाज में व्याप्त तात्कालिक समस्याओं के विरोध एवं उसके समाधान पर केन्द्रित रहा। इस आन्दोलन को मजबूती प्रदान करने के लिए समाज सुधारकों एवं साहित्यकारों ने भी अपना विशेष योगदान दिया। नवजागरण काल के प्रमुख साहित्यकारों में एक रामधारी सिंह दिनकर ने नवजागरण आन्दोलन पर यूरोपीय प्रभाव को स्पष्ट करते हुए लिखा हैं ''भारत यूरोप के साथ आने वाले धर्म से नहीं डरा बल्कि भय उसे यूरोप के विज्ञान को देखकर हुआ, उसकी बुद्धिवादिता, कर्मठता और साहस से हुआ। अतएव भारत में नवोत्थान का जो आन्दोलन उठा उसका लक्ष्य अपने धर्म, अपनी परंपरा और अपने विश्वासों

का त्याग नहीं बल्कि यूरोप की विशिष्टताओं के साथ उसका सामंजस्य बिठाना था।'' रामधारी सिंह दिनकर जी के इन विचारों से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज में नवजागरण आन्दोलन के लिए वैचारिक पृष्ठभूमि तैयार करने में पाश्चात्य देशों की वैज्ञानिक एवं समतामूलक विचारधारा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

19वीं सदी के आरंभिक दौर में भारतीय समाज में सामाजिक एवं धार्मिक सुधार की जो लहर चली, उसने सम्पूर्ण कुमाऊँ को अपने आगोश में ले लिया। कुमाऊँ भारत का एक अभिन्न पर्वतीय क्षेत्र है। यहां का अधिकांश भूभाग पर्वतों एवं जंगलों से आच्छादित है। इस कारण यहां की संस्कृति अन्य क्षेत्रों की तुलना में भिन्न रही है। ब्रिटिश शासन के आगमण से पूर्व की सामाजिक व्यवस्था भी अनेक सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों का गढ़ बन गया था। इस क्षेत्र में अंग्रेजी शिक्षा तथा ईसाई धर्म के प्रचार–प्रसार ने लोगों में समानता की भावना विकसित करने का कार्य किया। इस क्षेत्र में ईसाई धर्म के आगमन ने सनातन धर्म से जुड़े शोषित वर्ग के सामने धर्म परिवर्तन का विकल्प उपलब्ध कराया। अपने धर्म एवं सामाजिक व्यवस्था से अलगाव तथा ईसाई धर्म के प्रचारकों द्वारा लुभावने तरीके से इसका प्रसार करना एक बड़े वर्ग को धर्म परिवर्तन की दिशा में अग्रसर होने के लिए अभिप्रेरित किया। धर्म परिवर्तन की बढ़ती घटनाओं ने सनातन धर्म से जुड़े मठाधीशों के सामने इसे रोकने की चुनौती खड़ी कर दी। इसी परिस्थिति ने इस समाज में अनेक प्रकार की सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों के उन्मूलन आन्दोलन को हवा देने का कार्य किया। शिल्पकार आन्दोलन, कुली बेगार आन्दोलन, डोला पालकी आन्दोलन आदि समाज में आये वैचारिक परिवर्तन का ही परिणाम था, जो पाश्चात्य संस्कृति एवं शिक्षा के सम्पर्क में आने से हुई। यह एक जन आन्दोलन था, जिसमें समाज के बुद्धिजीवी वर्ग के साथ–साथ आम जनों की सहभागिता सुनिश्चित करना अत्यन्त महत्वपूर्ण था। आम जनों के बीच समानता की भावना विकसित करने तथा उनमें अपने अधिकारों के लिए मुखर होने का जज्बा विकसित करने के लिए समाज सुधारकों एवं बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा विविध तरीकों का प्रयोग किया गया। इन विविध तरीकों में लोक साहित्य विधा का अपना विशेष महत्व रहा है।

## कुमाऊँनी लोक साहित्य

कुमाऊँनी भाषा में प्राप्त होने वाला लोक साहित्य कुमाऊँनी लोक साहित्य कहलाता है। इस प्रकार के साहित्य का आरंभिक स्वरूप मूल रूप से मौखिक था जो कालांतर में लिखित रूप में भी अस्तित्व में आया। सामान्य तौर पर यह माना जाता है कि कुमाऊँ क्षेत्र में बोली के आविर्भाव के साथ ही कुमाऊँनी लोक साहित्य की परम्परा भी अस्तित्व में आई। आरंभिक दौर में कुमाऊँनी लोक साहित्य का संरक्षण एवं संवर्द्धन मौखिक रूप से ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित कर किया जाता था। मौखिक रूप से इस साहित्य के संरक्षण एवं संवर्द्धन की यह परंपरा अत्यन्त प्राचीन समय से चली आ रही है। इसकी प्राचीनता का प्रमाण यहाँ के लोक गीत, लोक कथा, लोकोक्ति एवं मुहावरे, लोकनाट्य आदि में आज भी स्पष्ट के रूप में परिलक्षित होता है।

## अध्ययन का महत्व

प्रस्तुत अध्ययन कुमाऊँ में 19 वीं सदी में हुए सामाजिक –धार्मिक आन्दोलनों में लोक साहित्य की भूमिका पर केन्द्रित है। लोक साहित्य समाज में जागरूकता लाने के सबसे कारगर साधनों में एक है। क्योंकि लोक साहित्य मौलिक रूप में लोक जन की भावनाओं से जुड़ा साहित्य है। इनकी इसी विशिष्टता के कारण नवजागरण काल के दौरान भी इसका प्रयोग व्यापक स्तर पर जनजागरूकता के लिए किया गया था। वर्तमान समय में समाज सांस्कृतिक संक्रमण, ग्रामीण एवं पर्वतीय क्षेत्रों से पलायन, महिला शिक्षा एवं स्वास्थ्य योजनाओं का अपेक्षित परिणाम से दूर रहना, धार्मिक अंधविश्वास आदि समस्याओं का सामना कर रहा है। इन समस्याओं के समाधान के लिए अनेक सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा निरंतर प्रयास भी किये जा रहे हैं। इस दिशा में यह शोध पत्र भी आदर्श मार्ग दिखाने में कारगर साबित होगा।

## नवजागरण आन्दोलन और कुमाऊँनी लोक साहित्य

नवजागरण आन्दोलन कुमाऊँ की पवित्र धरा पर एक नये समाज की नींव रखने का कार्य किया। एक ऐसा समाज जो समानता एवं भाई चारे की भावना से जुड़ा हो। हालांकि इसमें अपेक्षित सफलता प्राप्त हुई ऐसा कहना अतिशयोक्ति प्रतीत होता है। आज भी समाज में असमानता एवं भेदभाव के बीज देखने को मिलना स्वाभाविक घटना मानी जाती है। नवजागरण आन्दोलन को बुद्धिजीवी वर्ग के आन्दोलन से जन–जन के आन्दोलन में परिणत करने में यहां के लोक साहित्यकारों की भूमिका अत्यन्त प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण रही है। इन लोक साहित्यकारों में शिवदत्त सती का अपना विशेष स्थान है। आपने कुमाऊँनी भाषा के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। आपने हिन्दी और कुमाऊँनी दोनों भाषाओं में लिखने का कार्य किया है। इनकी प्रमुख रचनाओं में बुद्धि प्रवेश (तीन भाग), मित्र– विनोद तथा गोपी–गीत मुख्य हैं। ये तीनों ही पुस्तकें लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई से प्रकाशित हुई थी। बुद्धि–प्रवेश में लोकहितार्थ गीतों का संकलन किया गया है, जो हिन्दी एवं कुमाऊँनी दोनों भाषाओं में लिखे गये हैं। आपने अपनी कृति के माध्यम से समाज में व्याप्त असमानता, बुराईयां, पाखण्ड, आडम्बर तथा अन्धविश्वासों जैसी कुरीतियों पर गहरी चोट की है। शिवदत्त सती की रचनाओं से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि आपने अंधविश्वासों से लड़ रहे समाज सुधारकों का प्रबल समर्थन किया है। आपकी रचनाओं में जन्मभूमि के प्रति असीम प्रेम एवं श्रद्धा के भाव भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित हैं, जिसे उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से आमजनों तक पहुंचाने का कार्य किया। इनके इस सराहनीय प्रयास की झलक इस पंक्तियों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है–

अपण मुलुक भल, जां अपणी थात,
भटका डुबुक भला, मादिर क भात,
मढुवे की रोटी भली, शिशौणाक साग,
माल जाई के करलै, दगड़ै छ भाग।

श्री शिवदत्त सती अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों पर प्रत्यक्ष एवं प्रतीकात्मक दोनों ही रूपों में प्रहार करते हैं। 'मित्र विनोद' जो इनकी एक महत्वपूर्ण कृति है, में पक्षियों की पंचायत को प्रतीक बनाकर सामाजिक न्याय की ओर ध्यान आकृष्ट किया है, जो प्रतीकात्मक रूप से समाज की कुरीतियों पर प्रहार करने का एक उदाहरण मात्र है। आपने लिखा है कि–

अंछि जुड़ों पंछि जुड़ो, जुड़ि गो घमसांण जी,
बाजै कणि समजैंछ बाजै कि बौराण जी।
घुघुती करी जुगुती–मुकुति न जा मेर बाज जी,
अंछि जुड़ो पंछि जुड़ो, जुड़ि गो घमसांण जी।।

इस पंक्ति में 'बाज' जो एक पक्षी है, शोषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जबकि अन्य असहाय पक्षी समाज के शोषित वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। इस पंक्ति में बाज की पत्नी उन्हें सावधान करने के उद्देश्य से अवगत कराती है कि जंगल के समस्त निर्बल और असहाय पक्षी संगठित होकर मंत्रणा कर रहे हैं जिसमें पंचायत में आपके विरूद्ध आवाज उठाने की बात हो रही है। ऐसे में आपकों वहां नहीं जाना चाहिए। यह कथन प्रतीकात्मक रूप में

कहा गया है। इसके माध्यम से साहित्यकार समाज में व्याप्त शोषण के विरूद्ध एकजुट होने का संदेश देते हैं। उनका मानना है कि शोषक वर्ग चाहे वह पूंजीपति वर्ग हो या समाज के अभिजात वर्ग के विरूद्ध एकजुट होने की चेतना ही उनकी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त कर सकती है।

श्री शिवदत्त सती के साथ–साथ कुमाऊँ के नवजागरण में गौरीदत्त पाण्डे 'गौर्दा' का योगदान भी अविस्मरणीय रहा है। आपने अपनी रचनाओं के माध्यम से एक ओर जहां कुमाऊँनी साहित्य के विकास को गति प्रदान की वहीं दूसरी ओर तात्कालिक सामाजिक एवं धार्मिक समस्याओं के विरूद्ध आम जनों का पथ प्रदर्शन/राह दिखाने करने का कार्य भी किया। आपने सामाजिक बुराईयों, अंधविश्वासों, रूढ़िवादी मनोवृत्तियों आदि सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार किया है। इसके लिए उन्होंने तत्कालीन स्थानीय समाज के उपेक्षित वर्गो का चित्रण अपनी रचनाओं में किया। तत्कालीन समाज में प्रचलित बेमेल विवाह, पर्दा प्रथा, विधवा स्त्री के शोषण एवं उपेक्षा आदि कुरीतियों के विरुद्ध भी आपने कलम चलाई और जनता को जागृत करने का कार्य किया। समाज में व्याप्त सामाजिक असमानता पर चोट करते हुए सामाजिक समानता की बात की। आपने अपनी लेखनी में सामाजिक समानता की बात करते हुए लिखा है –

समता धरणी चैंछ सबन कैं।
राजा–परजा, ग्वार कालन कैं।।
दाड़ी चूली और मिश कैं।
वी पछिला द्विजन–हरिजन कैं।।
भंगी चमार और मोछिन कैं।
हुड़किया बादि और ढोलिन कैं।।
ल्वारा, टमटा और ओड़न कैं।
बाड़े, बांचड़, बारूड़ि लोगन कैं।।
सौन कुथलिया सब बौरन कैं।
पैली चाणो आपुण सुखन कैं।।
टटौली ल्हीणो भितरा मन कैं।
तैं पछिला फिरिमांगण हकन कैं।।

उपर्युक्त वर्णित पंक्तियों में गौर्दा ने प्रदेश में निवासरत भिन्न–भिन्न जातियों की चर्चा की है। इस प्रकार अलग–अलग जातियों के नाम का उल्लेख कर उनसे एक नये समाज के निर्माण की बात करते हैं। एक ऐसा समाज जिसमें जातिगत भेद–भाव, शोषण आदि के स्थान पर समतामूलक व्यवहार की प्रधानता हो। इनकी रचनाओं का संग्रह ''गौरी गुटका'' के नाम से प्रकाशित हुआ है। इन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से सामाजिक एवं धार्मिक सुधार की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है। आपकी रचनाओं में तत्कालीन समाज की समस्याओं की छवि स्पष्ट रूप में परिलक्षित है। 'गौर्दा' में राष्ट्र प्रेम की भावना प्रबल थी। वे अपनी मातृभूमि से अत्यधिक स्नेह रखते थे। उनका राष्ट्र प्रेम ही था जिसके कारण वे हमेशा कहते थे कि 'स्वराज्य प्राप्त करने से हमें कोई नहीं रोक सकता' जरूरत है तो बस इस बात की कि हम अपने पग कर्तव्य पथ से डिगने न दे।

गौर्दा तत्कालीन समाज में व्याप्त 'पिठावां प्रथा' (एक ऐसी सामाजिक प्रथा जिसमें परंपरा के नाम पर समाज गरीब एवं मजबूर लोगों को भी बारातों एवं उत्सव के अवसर पर अपनी जमीन गिरवी रख कर पिठावां या दक्षिणा देने को विवश करता था।) का घोर विरोध करते हैं। इनका विरोधी स्वर इनकी साहित्यिक रचनाओं में स्पष्ट रूप से परिलक्षित है। इनके इसी विरोध के कारण वास्तविकता की धरातल पर इन्हें कुमाऊँनी साहित्य के अन्तर्गत पुनर्जागरण का प्रमुख सिपाही कहा जाता है तथा इनकी रचनाओं को अचूक एवं प्रभावी अस्त्र के रूप में स्वीकार किया जाता है।

नवजागरण काल के दौरान कुमाऊँ जिन सामाजिक समस्याओं का सामना कर रहा था, उनमें सुधार की दिशा में इनकी रचनाओं का अपना विशेष महत्व है। इन्होंने एक ओर जहां अपनी रचनाओं में हास्य और व्यंग्य को शामिल किया वहीं सामाजिक बुराईयों यथा मद्यपान निषेध, स्वराज्य, समाज–सुधार, देश–प्रेम, समानता आदि को भी प्रमुखता के साथ स्थान दिया है। उनकी दो कविताएं 'वृक्षन को विलाप' और 'हल महात्म्य' में व्यंगात्मक शैली का प्रयोग किया गया है। इस कविता के माध्यम से समाज पर व्यंग्य करते हुए वे सामान्य जन को जागरूक करने का प्रयास करते हैं। वे इन रचनाओं में पर्यावरण संरक्षण पर जोर देते हुए कहते हैं कि जंगल गांव की अमूल्य सम्पत्ति है। इनकी शीतल छाया में ग्रामीण जीवन का विकास होता है। यही कारण है कि वनों का संरक्षण आवश्यक है। हल महात्म्य में उन उच्च वर्गीय ब्राह्मणों को सावधान करते हैं, जो समय की गति से अनभिज्ञ हैं तथा इस अनभिज्ञता के कारण हानि का भागीदार बनने की संभावना है। तत्कालिक समय में कुली बेगार प्रथा जो एक गंभीर सामाजिक समस्या बन चुकी थी पर भी गौर्दा ने अपने विचार अभिव्यक्त किये हैं। इस संदर्भ में अपने विचार अभिव्यक्त करते हुए वे लिखते हैं–

कानून म्हाती करि है विचार
पाप बगै है छ गंगज्यू की धार
अब जन धरि आपणां रूबार
निकाली नै निकला दिलदार
बागेश्वर है नी ग्या भार
कार्तिक देखि रया कीतिकार
मिनटों में बन्द करो छ उतार
हाकिम रै गया हाथ पसार
चेति गया तब त जिलेदार
बद्रीदत्त जैसा हुन च्याल चार
तबै हुआ छन मुल्क सुधर
कारण देश का छोड़ि रूजगार।

सन् 1921 में घटित कुली बेगार आन्दोलन का गौर्दा ने समर्थन किया। इस समर्थन के कारण उन्हें ब्रिटिश शासन के कोप का भाजक बनना पड़ा। इस घटना के समर्थन के कारण उन्हें अंग्रेजी सरकार ने बंदी बना लिया। उस समय गौर्दा स्थानीय जनमानस के बीच काफी लोकप्रिय बन गये थे। इन्हीं कारणों से सन् 1934 ई0 में अल्मोड़ा की जनता के द्वारा उन्हें स्वर्ण पदक प्रदान कर सम्मानित किया गया। इस सम्मान समारोह में उन्हें कुमाऊँनी भाषा का महान कवि कहा गया। महात्मा गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन के दौरान भी गौर्दा ने अपने गीतों के माध्यम से कुमाऊँनी जनता में जागरूकता फैलाने का कार्य किया।

लोक साहित्य के क्षेत्र में इन विभूतियों के अकल्पनीय एवं अविस्मरणीय योगदान ने नवजागरण काल में लोक साहित्य को जनजागरण का एक महत्वपूर्ण साधन बना दिया था। इसके अतिरिक्त अन्य समकालीन कुमाऊँनी साहित्यकारों एवं कवियों में चारूचन्द्र पाण्डे, नन्द कुमार उप्रेती, शेर सिंह बिष्ट 'अनपढ़', रमेश चन्द्र साह, हीरा सिंह राणा, गिरीश तिवाड़ी 'गिर्दा', दुर्गेश पंत, जुगल किशोर पेटशाली, बालम सिंह जनौटी, डॉ० शेर सिंह बिष्ट, डॉ० देव सिंह पोखरिया आदि प्रमुख स्थान रखते हैं।लोक साहित्य के द्वारा आम जनों के बीच जागरूकता फैलाने का यह सिलसिला नवजागरण आन्दोलन के बाद के वर्षों में भी देखने को मिलता है। आजादी के बाद की बदलती परिस्थितियों के साथ लोक साहित्य के मुद्दों में भी व्यापक परिवर्तन आया। हालांकि संचार के क्षेत्र में हुए अभूतपूर्व परिवर्तन तथा तकनीकी के बढ़ते प्रभावों ने साहित्य की महत्ता को प्रभावित किया है, लेकिन इन चुनौतियों के बावजूद सामाजिक जागरूकता के क्षेत्र में लोक साहित्य की भूमिका आज भी असंदिग्ध रूप से विशिष्ट बनी हुई है।

## निष्कर्ष

19वीं सदी भारतीय इतिहास में सामाजिक एवं धार्मिक परिवर्तन का काल रहा है। यह वह दौर था जबकि भारतीय समाज पाश्चात्य शिक्षा और संस्कृति के सम्पर्क में आने के कारण संक्रमणकालीन दौर से गुजर रहा था। भारतीय समाज में उत्पन्न इसी संक्रमणकालीन अवस्था ने भारत में आधुनिक समाज की नींव रखने का कार्य किया। आधुनिकीकरण की इस लहर भारत के अन्य क्षेत्रों के समान ही कुमाऊँ को भी प्रभावित किया है। मध्यकालीन समाज से आधुनिक समाज में प्रवेश करने के बीच की कालावधि बेहद संवेदनशील तथा सामाजिक–सांस्कृतिक दृष्टिकोण से संक्रमणकारी रही है। इस दौर में समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने और अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने में बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा अनेक साधनों का प्रयोग किये जाने का प्रमाण मिलता है। इन विविध साधनों में लोक साहित्य का अपना विशेष महत्व रहा है। वे न केवल आजादी के पूर्व विविध चुनौतियों से जूझ रहे समाज को जागरूक करने में कारगर रहे बल्कि आजादी के बाद भी समाज में बदलती सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों, भौतिकवादी एवं उपभोक्तावादी संस्कृति आदि के कारण उत्पन्न चुनौतियों के विरूद्ध आवाज बुलंद करते रहे। आज के समाज में जबकि व्यक्तिवादी जीवन संस्कृति का प्रभाव सामूहिक या सामाजिक जीवन संस्कृति पर भारी पर रहा है, तकनीकी विकास ने सम्पूर्ण विश्व को एक छत के नीचे लाने का कार्य किया है, के कारण समाज अनेक समस्याओं से रूबरू हो रहे हैं। इन चुनौतियों में संस्कृति संरक्षण की चुनौतियां, भ्रष्टाचार, अशिक्षा, पर्वतीय क्षेत्रों से पलायन, स्त्री स्वास्थ्य की समस्या, बेरोजगारी आदि प्रमुख हैं, के प्रति लोगों की चेतना जागृत करने तथा इससे लड़ने में लोक साहित्य एक प्रसांगिक साधन के रूप में आज प्रयुक्त किया जा सकता है। जरूरत है तो बस इसकी कि समय की मांग को समझते हुए इस दिशा में ठोस कदम उठाए जाएं।

## संदर्भ सूची


1. भट्ट (डॉ०) पुष्पलता, कुमाऊँनी लोक साहित्य, संस्कृति, भाषा एवं साहित्य, संजय प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 2010
2. पाण्डे पुष्पेश, औपनिवेशिक उत्तराखण्ड और राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष, अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा०) लिमिटेड, 2015
3. पनेरू डॉ. डी. के., कुमाऊँनी लोक साहित्य, देवभूमि प्रकाशन हल्द्वानी, 2013
4. रावत/पंवार (डॉ०) शशि बाला, जनपदीय गढ़वाली व कुमाऊँनी भाषा साहित्य, किताब महल पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2021,
5. सिंह वी.एन. एवं सिंह जनमेजय, भारत में सामाजिक आन्दोलन, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2013
6. सिंह वी.एन. एवं सिंह जनमेजय, नारीवाद, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2013
7. www.nainitalsamachar.com
8. www.merapahadforam.com